॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

## अथर्ववेदीय

# नृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद्

## शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥
ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

## प्रथम उपनिषद्

### नरसिंह-मन्त्रराजकी महिमा तथा उसके अङ्गोंका वर्णन

कहते हैं, पूर्वकालमें यह सब कुछ जल ही था। सर्वत्र सलिलराशि ही भरी हुई थी। उस जलमें वे प्रसिद्ध प्रजापति ब्रह्माजी कमलपत्रपर प्रकट हुए। उनके मनमें यह कामना हुई कि मैं इस जगत्‌की रचना करूँ। लोकमें यह प्रसिद्ध है कि पुरुष मनसे जिसकी भावना करता है, उसीको वाणीद्वारा बोलता है और फिर उसीको क्रियाद्वारा सिद्ध करता है। इसी सम्बन्धमें एक ऋचा है, जिसका भाव इस प्रकार है—पूर्वकालमें सृष्टिके अवसरपर मनसे काम—सृष्टि उत्पन्न करनेकी इच्छा प्रकट हुई। सृष्टिके पूर्व जो जलमात्र विद्यमान था, वही सबका कारण है। अपने अन्तःकरणमें स्थित अन्तरात्मापर दृष्टि रखनेवाले ज्ञानीजन उस कामको सत्स्वरूप आत्माका बन्धन मानते हैं। उन्होंने अपनी बुद्धिसे यह निश्चित किया कि असत् (प्रकृति)-के कार्यभूत मनमें ही कामका उदय होता है। जो इस बातको जानता है, वह जिस वस्तुकी कामना करता है, वह उसे प्राप्त हो जाती है।

उन प्रसिद्ध प्रजापतिने तपस्या आरम्भ की। उन्होंने तपस्या करके इस नारसिंह-मन्त्रराजका, जो अनुष्टुप् छन्दमें आबद्ध है, साक्षात्कार किया। निश्चय ही उस मन्त्रराजके प्रभावसे, उन्होंने जो कुछ यह प्रत्यक्ष उपलब्ध हो रहा है, इस सम्पूर्ण जगत्‌की रचना की। इसलिये यह जो कुछ भी जगत्‌रूपसे दृष्टिगोचर हो रहा है, इसे मन्त्रराज-आनुष्टुभमय ही कहते हैं। इस अनुष्टुप्-मन्त्रसे ही ये सम्पूर्ण प्राणी उत्पन्न होते हैं, उत्पन्न होनेपर वे अनुष्टुप्-मन्त्रसे ही जीवित रहते हैं और मृत्युके समय इस लोकसे प्रयाण करनेपर वे अनुष्टुप्-मन्त्रमें ही सब ओरसे प्रवेश कर जाते हैं। मन्त्रराजकी यह अनुष्टुप्-वृत्ति समस्त सृष्टिकी आदिभूता एवं प्रधान कारण है। निश्चय ही वाणीमात्र अनुष्टुप् है; क्योंकि वाणीसे ही प्राणी मृत्युको प्राप्त होते हैं और वाणीसे ही उत्पन्न होते हैं। यह जो अनुष्टुप् छन्द है, वह निश्चय ही सब छन्दोंमें श्रेष्ठ है ॥ १ ॥

समुद्र, पर्वत और सातों द्वीपोंसहित जो यह पृथ्वी है, इसे मन्त्रराजरूप सामका प्रथम चरण जाने। यक्ष, गन्धर्व तथा अप्सराओंसे सेवित जो अन्तरिक्षलोक है, उसे सामका द्वितीय चरण जाने। वसु, रुद्र और आदित्य आदि सम्पूर्ण देवताओंसे सेवित जो द्युलोक है, उसे सामका तृतीय चरण जाने तथा जो निरञ्जन—मायारूप मलसे रहित, विशुद्ध परम व्योममय ब्रह्मस्वरूप है, उसे सामका चतुर्थ चरण जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। ऋक्, यजुः, साम और अथर्व—ये अङ्गों और शाखाओंसहित चार वेद उपर्युक्त मन्त्रराजके चार पाद हैं। उस मन्त्रराजका ध्यान क्या है? देवता कौन-सा है? कौन-कौनसे अङ्ग हैं? कौन-सा देवताओंका गण है? कौन-सा छन्द है और कौन-सा ऋषि है? ॥ २ ॥

वे प्रसिद्ध प्रजापति ब्रह्माजी बोले—निश्चय ही वह पुरुष जो श्रीबीज (श्रीं)-से अभिषिक्त गायत्री-मन्त्रके आठ अक्षरवाले चरणको इस मन्त्रराजरूप सामका अङ्ग

जानता है, वह श्री (शोभा एवं सम्पत्ति)-से सुशोभित होता है। सम्पूर्ण वेद प्रणवादि हैं, उनके आदिमें प्रणव—ॐकारका ही उच्चारण किया जाता है। उस प्रणवको जो इस सामका अङ्ग समझता है, वह तीनों लोकोंपर विजय पा लेता है। चौबीस अक्षरोंवाला महालक्ष्मी-मन्त्र यजुःस्वरूप है; उसे जो सामका अङ्ग जानता है, वह आयु, यश, कीर्ति, ज्ञान और ऐश्वर्यसे सम्पन्न होता है। इसलिये अङ्गोंसहित इस सामको जाने। जो अङ्गोंसहित सामको जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। गायत्री, प्रणव तथा यजुःस्वरूप महालक्ष्मी-मन्त्रका उपदेश ज्ञानीजन स्त्री और शूद्रोंको नहीं देना चाहते। बत्तीस अक्षरोंवाले सामको जाने; जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। गायत्री, प्रणव और यजुर्वेदमय महालक्ष्मी-मन्त्रको यदि स्त्री और शूद्र जान लें तो वे मरनेपर अधोगतिको प्राप्त होते हैं—नरक और नीची योनियोंमें गिरते हैं। इसलिये सदा ही सावधान रहकर उनको इन मन्त्रोंका उपदेश न दे। यदि कोई उन्हें उपदेश देता है तो वह आचार्य भी उन्हींके साथ मरनेपर अधोगतिको प्राप्त होता है—नरकादिमें पड़ता है॥ ३॥

प्रजापतिने फिर कहा—निश्चय ही अग्नि, सारे वेद, यह सम्पूर्ण जगत्, समस्त प्राणी, प्राण, इन्द्रिय, पशु, अन्न, अमृत, सम्राट्, स्वराट् और विराट्—इन सबको इस मन्त्रराज रूप सामका प्रथम चरण जाने। ये ऋक्, यजुः, साम और अथर्वरूप सूर्य तथा सूर्यमण्डलके भीतर स्थित रहनेवाले हिरण्मय पुरुष—इनको सामका द्वितीय पाद जाने। जो समस्त ओषधियों (अन्नों और फलों)-के स्वामी तारापति चन्द्रमा है, उनको सामका तृतीय चरण जाने। वे ब्रह्मा, वे शिव, वे विष्णु, वे इन्द्र, वे अग्नि, वे अविनाशी परमात्मा स्वराट्—इन सबको उस सामका चतुर्थ चरण समझे। जो इस प्रकार जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है।

'**उग्रम्**' यह पद मन्त्रराज अनुष्टुप्के प्रथम चरणका आदि अंश है। '**ज्वलम्**' यह उसके द्वितीय चरणका आदि अंश है। '**नृसिं**' यह अंश तृतीय चरणका आदि भाग है तथा '**मृत्यु**' पद चतुर्थ चरणका आदि भाग है। इन सबको सामस्वरूप समझे। जो यों समझता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। इसलिये इस सामको जहाँ-कहीं—सबको न बताये। यदि यह मन्त्र किसीको देनेकी इच्छा हो तो सेवापरायण एवं सुननेके लिये उत्सुक पुत्रको दे अथवा दूसरे किसी शिष्यको भी दिया जा सकता है॥ ४॥

वे सुप्रसिद्ध प्रजापति फिर बोले—भगवान्का जो क्षीरसागरमें शयन करनेवाला नृसिंह-विग्रह है, वह योगियोंके लिये भी ध्यान करनेयोग्य परमपद है। उसे सामस्वरूप समझे। यों समझनेवाला अमृतत्वको प्राप्त होता है। '**वीरम्**' इस पदको मन्त्रराज अनुष्टुप्के प्रथम चरणके पूर्वार्धका अन्तिम अंश जाने। '**तं स**' इस अंशको द्वितीय चरणके पूर्वार्धका अन्तिम भाग समझे। '**हं भी**' इस अंशको तृतीय चरणके पूर्वार्धका अन्तिम भाग माने और '**मृत्युम्**' पदको चतुर्थ चरणके पूर्वार्धका अन्तिम भाग समझे तथा इन सबको साम जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। इसलिये इस सामको जो जिस किसी भी आचार्यके मुखसे इस प्रकार जानता है, वह उसी शरीरमें रहते हुए संसारसे मुक्त हो जाता है, दूसरोंको भी मुक्त करता है तथा यदि वह संसारमें आसक्त रहा हो तो इस सामके ज्ञानसे मुमुक्षु बन जाता है। इस मन्त्ररूप सामका जप करनेसे वह उसी शरीरसे आराध्य देवता (भगवान् नृसिंह)-का प्रत्यक्ष दर्शन कर लेता है। अतः कलियुगमें यही मोक्षका द्वार है। दूसरोंको मोक्षकी प्राप्ति सहजमें नहीं होती। इसलिये इस सामको अङ्गोंसहित जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है॥ ५॥

भगवान् नृसिंहको ऋत और सत्य समझे। वे सर्वव्यापी परमात्मा एवं अन्तर्यामी पुरुष हैं। वे मनुष्य और सिंहकी सम्मिलित आकृति धारण करनेसे कृष्ण और पिङ्गलवर्णके दिखायी देते हैं। वे ऊर्ध्वरेता (नैष्ठिक ब्रह्मचर्यसे सम्पन्न) हैं। उनके नेत्र बड़े विकराल एवं भयङ्कर हैं। तथापि वे शङ्कर हैं, सबका कल्याण करनेवाले हैं। कण्ठप्रदेशमें नील एवं उसके ऊर्ध्वभागमें तेजोमय लोहितवर्ण होनेसे वे ही 'नीललोहित' नाम धारण करते हैं। ये सर्वदेवमय भगवान् नृसिंह ही दूसरे रूपमें गिरिराजकन्या उमाके स्वामी, पशुपति, पिनाकधारी एवं अपार तेजस्वी महेश्वर हैं। ये ही सम्पूर्ण विद्याओंके अधीश्वर और समस्त भूतोंके अधिपति हैं। जो ब्रह्म (वेद)-के अधिपति हैं, ब्रह्माजीके स्वामी हैं तथा जो यजुर्वेदके वाच्यार्थ हैं, उन भगवान् नृसिंहको साम जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। '**महा**' शब्द मन्त्रराज अनुष्टुप्के प्रथम चरणके उत्तरार्धका आदि भाग है। '**वंतः**' शब्द द्वितीय चरणके उत्तरार्धका आदि भाग है। '**षणम्**' शब्द तृतीय चरणके उत्तरार्धका आदि भाग है तथा '**नमामि**' शब्द चतुर्थ चरणके उत्तरार्धका आदि भाग है। इन सबको साम जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। अतः यह साम सच्चिदानन्दमय परब्रह्मस्वरूप है। उसे इस रूपमें

जाननेवाला यहाँ—इसी जीवनमें अमृतस्वरूप हो जाता है। इसलिये इस सामको अङ्गोंसहित जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है॥ ६॥

विश्वस्रष्टा प्रजापतिगणोंने इस साममय मन्त्रके प्रभावसे ही सम्पूर्ण विश्वकी सृष्टि की है। उन्होंने विश्वकी रचना की है, इसीलिये वे विश्वस्रष्टा हैं। यह विश्व इन्हींसे उत्पन्न होता है, इस रहस्यको जाननेवाले उपासक ब्रह्माजीके लोकको तथा उनके सायुज्यको प्राप्त होते हैं—उन्हींमें लीन हो जाते हैं, इसलिये अङ्गोंसहित इस सामको जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है।

'**विष्णुम्**' पद पूर्वोक्त आनुष्टुभ नारसिंह मन्त्रराजके प्रथम चरणका अन्तिम पद है। '**मुखम्**' द्वितीय पादका अन्तिम पद है। '**भद्रम्**' तृतीय चरणका अन्तिम पद है। '**म्यहम्**' चतुर्थ पादका अन्तिम पद है। यह सब साम है—इस प्रकार जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है।

वे जो सुप्रसिद्ध प्रजापति हैं, उन्होंने ही यह सब कुछ (जो पहले बतायी हुई उपासना आदिका तत्त्व है) जाना। सबके 'आत्मा' रूप ब्रह्ममें ही जिसकी स्थिति है, ऐसे इस आनुष्टुभ मन्त्रको जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है।

उपासना करनेवाले स्त्री-पुरुषोंमें जो भी निश्चितरूपसे यहाँ उत्कृष्ट स्थितिमें रहनेकी इच्छा करते हैं, उन्हें भगवान् नृसिंह सम्पूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करते हैं। वह जहाँ-कहीं भी प्राण-त्याग करता है, अन्तकालमें भगवान् नृसिंह वहीं उसे परब्रह्ममय तारक-मन्त्रका उपदेश करते हैं, जिससे वह अमृतस्वरूप होकर अमृतत्व (मोक्ष)-को प्राप्त होता है। इसलिये साममध्यवर्ती तारकमन्त्र (एवं सामोपासनाके अङ्गभूत प्रणव)-का जप करना चाहिये। अतः (मन्त्रद्रष्टा ऋषि होनेके कारण) सामके अङ्गभूत प्रजापति ही यह तारक-मन्त्र हैं। इसलिये सामके अङ्गभूत प्रजापति ही यह तारक-मन्त्र हैं—इस प्रकार जो जानता है, वही यथार्थ उपासक है। यह महोपनिषद् है (जिसके द्वारा महान् परमेश्वरके तत्त्वका यथार्थ ज्ञान हो, उसीका नाम महोपनिषद् है)। जो इस महोपनिषद्को जानता है—इसमें बताये अनुसार उपासना करता है, वह मानो सारा पुरश्चरण पूरा करके महाविष्णुरूप हो जाता है, महाविष्णुरूप हो जाता है॥ ७॥

# द्वितीय उपनिषद्

## मन्त्रराजकी शरण लेनेका फल; उसके अङ्गोंका विशद वर्णन; न्यासकी विधि तथा मन्त्रके प्रत्येक पदकी व्याख्या

कहते हैं, एक बार सब देवताओंको मृत्यु, पाप और संसारसे बड़ा भय हुआ। वे भागकर प्रजापति ब्रह्माजीकी शरणमें गये। प्रजापतिने उनको भगवान् नृसिंहके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका उपदेश दिया। इस मन्त्रके प्रभावसे उन सब देवताओंने मृत्युको जीत लिया। वे सब पापसे तर गये तथा इस संसारसे भी पार हो गये। इसलिये जो मृत्यु, पाप तथा संसारसे भी डरता हो, उसे भगवान् नृसिंहके इस मन्त्रराज आनुष्टुभकी शरण लेनी चाहिये। जो इसकी शरण लेता है, वह मृत्युको पार कर जाता है। वह पापसे तर जाता है तथा वह संसारसे भी पार हो जाता है।*

पूर्वोक्त सुप्रसिद्ध मन्त्रराजका अङ्गभूत जो प्रणव है, उस प्रणवकी पहली मात्रा अकार है; उसका पृथ्वी लोक है, ऋचाओंसे उपलक्षित ऋग्वेद ही वेद है, ब्रह्मा देवता हैं, वसु नामक देवताओंका गण है, गायत्री छन्द है तथा गार्हपत्य अग्नि है। यह सब प्रणवकी पहली मात्राके अन्तर्गत है और वह पहली मात्रा ही मन्त्ररूप सामका प्रथम पाद है। उक्त प्रणवकी दूसरी मात्रा उकार है; इसीके अन्तर्गत अन्तरिक्ष-लोक, यजुर्मन्त्रोंसे उपलक्षित यजुर्वेद, विष्णु देवता, रुद्र नामक देवताओंका गण, त्रिष्टुप् छन्द और दक्षिण नामक अग्नि है। यह दूसरी मात्रा ही साम अर्थात् मन्त्रका द्वितीय पाद है। तीसरी मात्रा मकार है; इसीके अन्तर्गत द्युलोक नामक लोक, सामोपलक्षित सामवेद वेद, रुद्र देवता, आदित्य नामक देवताओंका गण, जगती छन्द तथा आहवनीय अग्नि है। वह तीसरी मात्रा ही इस सामका तीसरा चरण है। प्रणवके उच्चारणकी समाप्ति होनेपर उसकी चौथी मात्राके रूपमें जो नादात्मक अर्धमात्रा सुनायी देती है, उसीके

* मन्त्रराज यह है—

ॐ उग्रं वीरं महाविष्णुं ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्। नृसिंहं भीषणं भद्रं मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्॥

अन्तर्गत सोमलोक नामक लोक, ॐकार वाच्य परब्रह्म देवता, अथर्व-मन्त्रोंसहित अथर्ववेद ही वेद, संवर्तक नामक अग्नि, मरुत् नामक देवताओंका गण तथा विराट् छन्द है। इस चतुर्थ मात्राविशिष्ट ॐकारके एक ही ऋषि हैं—ब्रह्माजी। यह चौथी मात्रा तुरीया ब्रह्मस्वरूपा होनेके कारण परम प्रकाशमयी है। यही सामका चतुर्थ पाद है*॥ १॥

अनुष्टुप्-मन्त्रका प्रथम चरण आठ अक्षरोंका है। शेष तीन चरण भी आठ-आठ अक्षरोंके ही हैं। इस प्रकार कुल बत्तीस अक्षर होते हैं। निश्चय ही अनुष्टुप्-वृत्ति बत्तीस अक्षरोंकी होती है। अनुष्टुप्से ही इस सम्पूर्ण विश्वकी रचना हुई है। अनुष्टुप्के द्वारा ही सबका उपसंहार होता है। उस अनुष्टुप्-मन्त्रके पाँच अङ्ग हैं। इसके चार चरण ही चार अङ्ग हैं तथा प्रणवको साथ लेकर सम्पूर्ण मन्त्र पाँचवाँ अङ्ग होता है। **हृदयाय नमः, शिरसे स्वाहा, शिखायै वषट्, कवचाय हुम्, अस्त्राय फट्**—इनमें शरीरके पाँच अङ्गोंका उल्लेख है। ऊपर अनुष्टुप्-मन्त्रके भी पाँच अङ्ग बताये गये हैं, अतः मन्त्रके प्रथम अङ्गका हृदयरूप प्रथम अङ्गसे संयोग कराना चाहिये। इसी प्रकार दूसरे अङ्गका दूसरे मस्तकरूप अङ्गसे, तीसरे अङ्गका तीसरे शिखारूप अङ्गसे, चतुर्थ अङ्गका चौथे उभय बाहुमूलरूप अङ्गसे और पञ्चम अङ्गका पाँचवें मस्तकरूप अङ्गसे सम्बन्ध होता है†। निश्चय ही ये सम्पूर्ण लोक एक-दूसरेसे सम्बद्ध हैं, इसलिये उक्त अङ्ग भी परस्पर सम्बद्ध होते हैं। ॐ यह अक्षर ही यह सम्पूर्ण जगत् है। इसलिये अनुष्टुप्-मन्त्रके प्रत्येक अक्षरके दोनों ओर—पहले और पीछे ॐकारका सम्पुट लगाना चाहिये। ब्रह्मवादी महात्मा उक्त मन्त्रके प्रत्येक अक्षरके न्यासका उपदेश करते हैं‡॥ २॥

निश्चय ही '**उग्रम्**' इस पदको उस प्रसिद्ध अनुष्टुप्-मन्त्रका प्रथम स्थान जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। '**वीरम्**' यह पद द्वितीय स्थान है। '**महाविष्णुम्**' पद तृतीय स्थान है। '**ज्वलन्तम्**' पद चतुर्थ स्थान है। '**सर्वतोमुखम्**' पद पञ्चम स्थान है। '**नृसिंहम्**' पद छठा स्थान है। '**भीषणम्**' पद सातवाँ स्थान है। '**भद्रम्**' पद आठवाँ स्थान है। '**मृत्युमृत्युम्**' पद नवाँ स्थान है। '**नमामि**' पद दसवाँ स्थान है। '**अहम्**' पद ग्यारहवाँ स्थान है। इस प्रकार जानना चाहिये। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है। निश्चय ही यह अनुष्टुप्वृत्ति ग्यारह पदोंकी है। इस अनुष्टुप्-मन्त्रके द्वारा ही इस सम्पूर्ण विश्वकी रचना हुई है। तथा अनुष्टुप्के द्वारा ही सबका उपसंहार होता है। इसलिये सब कुछ अनुष्टुप्-मन्त्रका ही विस्तार है—यों जाने। जो जानता है, वह अमृतत्वको प्राप्त होता है॥ ३॥

कहते हैं, देवताओंने प्रजापतिसे पूछा—"भगवान् नृसिंहके लिये '**उग्रम्**' यह विशेषण क्यों दिया जाता है? उन्हें उग्र क्यों कहा जाता है?" तब वे प्रसिद्ध प्रजापति बोले—"क्योंकि भगवान् नृसिंह अपनी महिमासे सम्पूर्ण लोकों, समस्त देवों, सभी आत्माओं तथा सभी भूतोंको ऊपर उठाये रखते हैं, निरन्तर उनकी सृष्टि करते हैं, नाना प्रकारसे उनकी सृष्टिका विस्तार तथा संहार करते हैं, उन सबको अपने ही भीतर बसाते—लीन कर लेते हैं, दूसरोंसे इस जगत्पर उद्ग्रह (अनुग्रह) करवाते हैं तथा स्वयं भी इसपर अनुग्रह करते हैं, इसलिये 'उग्र' कहलाते हैं। इस विषयमें

* इस प्रकरणका सारांश यह है कि प्रणवकी चार मात्राएँ हैं— अ, उ, म् और अर्धमात्रा। क्रमशः इनके चार लोक हैं—पृथ्वीलोक, अन्तरिक्षलोक, स्वर्गलोक और सोमलोक। चार ही वेद हैं—ऋक्, यजुः, साम तथा अथर्व। चार ही देवता हैं—ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा ॐकारवाच्य परब्रह्म। चार ही छन्द हैं—गायत्री, त्रिष्टुप्, जगती तथा विराट्। चार ही अग्नियाँ हैं—गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि, आहवनीय और संवर्तक। ये सब मिलकर प्रणवस्वरूप हैं; इस विश्वरूप प्रणवमें अन्तर्यामीरूपसे स्थित उपास्यदेव भगवान् नृसिंहकी उपासना करनी चाहिये।

† यहाँ अङ्गन्यासका विधान किया गया है। इसके अनुसार न्यासका क्रम इस प्रकार होगा—'ॐ उग्रं वीरं महाविष्णुम्' हृदयाय नमः—यों कहकर दाहिने हाथकी पाँचों अङ्गुलियोंसे हृदयका स्पर्श करे। फिर 'ज्वलन्तं सर्वतोमुखम्' शिरसे स्वाहा—यों कहकर उक्त अङ्गुलियोंसे ही मस्तकका स्पर्श करे। तत्पश्चात् 'नृसिंहं भीषणं भद्रम्' शिखायै वषट्—इसका उच्चारण करके पूर्ववत् शिखाका स्पर्श करे। तदनन्तर 'मृत्युमृत्युं नमाम्यहम्' कवचाय हुम्—इसका उच्चारण करके दाहिने हाथकी अङ्गुलियोंसे बायें कन्धेका और बायें हाथकी अङ्गुलियोंसे दायें कन्धेका एक साथ ही स्पर्श करे। फिर प्रणवसहित पूरे मन्त्रके साथ 'अस्त्राय फट्' कहकर दाहिने हाथको मस्तकके ऊपर बायीं ओरसे पीछेकी ओर ले जाकर दाहिनी ओरसे आगेकी ओर ले आये और तर्जनी तथा मध्यमा अङ्गुलियोंसे बायें हाथकी हथेलीपर ताली बजाये।

‡ अनुष्टुप्-मन्त्रमें कुल बत्तीस अक्षर हैं; उनमेंसे प्रत्येक अक्षरको प्रणवसे सम्पुटित करके शिखासे लेकर पैरतकके बत्तीस अङ्गोंमें क्रमशः न्यास करना चाहिये। यथा—'ॐ उ ॐ नमः शिखायाम्', 'ॐ ग्रं ॐ नमः दक्षिणनेत्रे' इत्यादि।

ऋग्वेदका मन्त्र भी है, जिसका भाव इस प्रकार है—'श्रुतियाँ जिनकी स्तुतिमें संलग्न हैं, उन उपास्यदेव परमात्माका स्तवन करो। वे गर्तमें—हृदयरूपी गुफामें स्थित हैं (अथवा व्यूहरूप महाचक्र ही यहाँ गर्त है, उसमें स्थित हैं)। नवतारुण्यसे सुशोभित हैं। मृग अर्थात् सिंहके रूपमें प्रकट होकर भी भक्तजनोंके लिये भयङ्कर नहीं हैं। सदा सबपर अनुग्रह करनेके लिये सर्वत्र सबके निकट पहुँचनेवाले हैं तथा उग्र हैं—साधु पुरुषोंपर अनुग्रह और दुष्टजनोंका निग्रह करनेवाले हैं। हे नृसिंहदेव! आपकी स्तुति की जाती है; इससे संतुष्ट होकर आप स्तवन करनेवाले मुझ भक्तको सुखी बनाइये। आपकी भयङ्कर सेना हमें छोड़कर अन्यत्र आक्रमण करे।' अर्थात् दुष्टोंका संहार और भक्तोंकी रक्षा करे। इस मन्त्रमें भगवान् नृसिंहका 'उग्र' के नामसे स्तवन किया गया है; इसलिये वे 'उग्र' कहे जाते हैं।''

देवताओंने पूछा—''प्रजापते! अब यह बताइये, भगवान्‌के लिये '**वीरम्**' यह विशेषण क्यों दिया जाता है—वे 'वीर' क्यों कहे जाते हैं?'' इसपर प्रजापति उत्तर देते हैं—''क्योंकि अपनी महिमासे वे सब लोकों, सब देवों, सब आत्माओं और सम्पूर्ण भूतोंके साथ विविध प्रकारसे क्रीड़ा करते, सबको विश्राम देते, निरन्तर सृष्टि और पालन करते, उपसंहार करते और अपने अंदर लीन करते हैं, अतः 'वीर' कहे जाते हैं। ऋग्वेदका वचन है—भगवान् शूरवीर हैं, कर्मठ हैं, भक्तोंपर अनुग्रह करनेमें पूर्णतः दक्ष हैं, सोमयागमें पत्थर हाथमें लिये रहनेवाले 'अध्वर्यु' आदिके रूपमें भगवान् नृसिंह ही हैं। ये ही देवकाम हैं—देवताओंको उत्पन्न करनेके अभिलाषी हैं।''

(प्रश्न) अब यह बतायें—भगवान् '**महाविष्णुम्**' क्यों कहे जाते हैं? (उत्तर) वे अपनी ही महिमासे सब लोकोंको, सब देवताओंको, समस्त आत्माओंको तथा सब भूतोंको व्याप्त करके स्थित हैं। जैसे चिकनाई मांस-पिण्डमें व्याप्त रहती है, उसी प्रकार वे शरीरके अवयवोंमें सर्वत्र व्यापक हैं। उन्हींमें यह विश्व लीन होता है। उन्हींमें यह सर्वथा ओतप्रोत एवं सम्बद्ध है। वे इसमें निरन्तर व्याप्त रहते हैं। इससे निरन्तर सम्बन्ध रखकर ही वे व्याप्त और व्यापक होते हैं। ऋग्वेदमें कहा है—'जिनसे बढ़कर दूसरा कोई उत्पन्न ही नहीं हुआ, जो सर्वव्यापी होनेके कारण सम्पूर्ण विश्वमें समानरूपसे आविष्ट (व्याप्त) हैं, जो प्रजाके पालक हैं और प्रजाके द्वारा जिनकी उपासना होती रहती है, वे भगवान् नृसिंह षोडशकला-विशिष्ट होकर त्रिविध ज्योतियोंमें व्याप्त रहते हैं।' इसीलिये वे 'महाविष्णु' कहलाते हैं।

(प्रश्न) अब यह बतायें—भगवान्‌के लिये '**ज्वलन्तम्**' इस विशेषणका प्रयोग क्यों किया जाता है? (उत्तर) वे अपनी ही महिमासे सब लोकोंको, सब देवताओंको, सब आत्माओंको और सम्पूर्ण भूतोंको अपने तेजसे प्रकाशित करते तथा स्वयं भी प्रज्वलित एवं प्रकाशित होते हैं। सब लोक उन भगवान्‌के ही प्रकाशसे प्रकाशित होते और दूसरोंको भी प्रकाशित करते हैं। ऋग्वेदका वचन है—'वे ही सविता (प्रकाशक) और प्रसविता (उत्पादक) हैं। वे स्वयं दीप्तिमान् हैं। दूसरोंको उद्दीप्त करते और स्वयं भी उद्दीप्त होते हैं। स्वयं प्रज्वलित होते हुए दूसरोंको प्रज्वलित करते हैं। तपते हुए तपाते हैं तथा संताप देते हैं। स्वयं कान्तिमान् होकर दूसरोंको भी कान्तिमान् बनाते हैं। स्वयं शोभायमान होकर दूसरोंको भी सुशोभित करते हैं तथा परम कल्याणस्वरूप हैं।' इसीलिये उनके लिये '**ज्वलन्तम्**' विशेषणका प्रयोग किया गया है।

(प्रश्न) अब यह बतायें—भगवान्‌को '**सर्वतोमुखम्**' क्यों कहा जाता है? (उत्तर) वे अपनी ही महिमासे सब लोकों, सब देवताओं, सब आत्माओं और सम्पूर्ण भूतोंको, स्वयं इन्द्रियरहित होते हुए भी, सब ओरसे देखते हैं, सब ओरसे सुनते हैं, सब ओरसे जाते हैं, सब ओरसे ग्रहण करते हैं। सर्वत्रगामी होते हुए सब स्थानोंमें विद्यमान रहते हैं। ऋग्वेदमें कहा है—'जो सबसे पहले अकेले था, जो स्वयं इस जगत्‌के रूपमें प्रकट हो गये, जिनसे इस विश्वकी उत्पत्ति हुई है, जो सम्पूर्ण भुवनके पालक हैं, प्रलयकालमें समस्त भुवन जिनमें विलीन होता है, उन सर्वतोमुख (सब ओर मुखोंवाले) भगवान्‌को मैं नमस्कार करता हूँ।' इस श्रुतिमें उनका 'सर्वतोमुख' नाम प्रयुक्त हुआ है, इसीलिये उन्हें 'सर्वतोमुख' कहते हैं।

(प्रश्न) अब यह बतानेकी कृपा करें कि भगवान्‌को '**नृसिंहम्**' क्यों कहा गया है? (उत्तर) सम्पूर्ण प्राणियोंमें नर (मनुष्य) अधिक पराक्रमी तथा सबसे श्रेष्ठ है। इसी प्रकार सिंह भी सबसे अधिक शक्तिशाली और सबसे अधिक श्रेष्ठ है; इसलिये परमेश्वर नर और सिंह दोनोंका संयुक्त रूप धारण करके प्रकट हुए। निश्चय ही उनका यह स्वरूप जगत्‌का कल्याण करनेके लिये ही है। यह स्वरूप सनातन एवं अविनाशी है। ऋचा कहती है—'भगवान्

विष्णु मृग अर्थात् सिंहरूपमें स्थित होकर उपासकोंद्वारा स्तुत होते हैं। विभिन्न उपासक स्तोत्रोंद्वारा उनकी स्तुति करते हैं। स्तुतिका उद्देश्य है—नाना प्रकारकी शक्ति प्राप्त करना। भगवान् सिंहके रूपमें प्रकट होकर भी भक्तजनोंके लिये भयङ्कर नहीं हैं। वे पृथिवीपर विचरते हैं और पर्वतपर भी स्थित होते हैं अथवा वे कहाँ नहीं हैं—सभी रूपोंमें हैं, स्तुति करनेवालोंकी वाणीमें भी हैं। ये वे ही भगवान् हैं, जिनके तीन बड़े-बड़े डगोंमें सम्पूर्ण विश्व (तीनों लोक) समा जाते हैं अथवा जो ब्रह्मा, विष्णु और शिव—तीन रूपोंमें लीला करते हैं।' इन्हीं सब कारणोंसे इन्हें 'नृसिंह' कहते हैं।

(प्रश्न) अब यह बतायें कि भगवान्‌के लिये '**भीषणम्**' विशेषणका प्रयोग क्यों किया जाता है? (उत्तर) इनके भीषण रूपको देखकर सब लोक, समस्त देवता और सम्पूर्ण भूत-प्राणी भयसे घबराकर भागने लगते हैं; किंतु ये स्वयं किसीसे भी भयभीत नहीं होते। इनके विषयमें ऋचा कहती है—'इनके भयसे ही वायु चलती है, इनके भयसे ही सूर्य ठीक समयसे उदित होता है; इन्द्र, अग्नि, और पाँचवीं मृत्यु—ये सब भी इनके भयसे ही अपने-अपने कर्तव्यका पालन करनेके लिये दौड़ लगाते रहते हैं।' इसीलिये इनको 'भीषण' कहा जाता है।

(प्रश्न) अब यह बताना चाहिये कि भगवान्‌को '**भद्रम्**' क्यों कहा गया है? (उत्तर) इसलिये कि भगवान् स्वयं भद्र (कल्याण)-स्वरूप होकर सदा सबको भद्र (कल्याण) प्रदान करते हैं। वे कान्तिमान् होकर दूसरोंको कान्तिमान् बनाते और स्वयं शोभासम्पन्न होकर दूसरोंको भी सुशोभित करते हैं तथा साक्षात् कल्याणमय हैं। ऋग्वेद भी कहता है—'देवताओ! यजन (भगवान्‌का आराधन) करते हुए हमलोग अपने कानोंसे भद्र (कल्याण)-का श्रवण करें। नेत्रोंसे भद्र (कल्याण)-का ही दर्शन करें। अपने सुदृढ़ अङ्गों तथा त्रिविध शरीरोंद्वारा भगवान्‌का स्तवन करते हुए हमलोग ऐसी आयुका उपभोग करें, जो हमारे उपास्यदेव भगवान्‌के काम आ सके।' इस श्रुतिमें भगवान्‌का नाम 'भद्र' आया है। इसलिये उनको 'भद्र' कहते हैं।

(प्रश्न) अब यह बताना चाहिये कि भगवान्‌के लिये '**मृत्युमृत्युम्**' यह विशेषण क्यों प्रयुक्त हुआ है? (उत्तर) इसलिये कि वे स्मरण करते ही अपनी ही महिमाद्वारा अपने भक्तोंकी मृत्यु और अपमृत्यु—अकालमृत्युको भी मार डालते हैं। ऋचा भी कहती है—'जो आत्मा (अपना स्वरूप) और बल प्रदान करनेवाले हैं, सम्पूर्ण देवता जिनके अनुशासनका नतमस्तक होकर पालन करते हैं, जिनकी छाया—जिनका आश्रय अमृतरूप है, जो मृत्युके लिये भी मृत्युरूप हैं, ऐसे एक देवता—भगवान् नृसिंहकी हम हविष्यद्वारा—अपनी ही भेंट अर्पण करके उपासना करते हैं।' इस श्रुतिके अनुसार भगवान्‌का नाम मृत्युमृत्यु भी है, इसीलिये उन्हें 'मृत्युमृत्यु' कहा जाता है।

(प्रश्न) अब यह बताना चाहिये कि मन्त्रराज आनुष्टुभमें '**नमामि**' इस पदका प्रयोग क्यों किया जाता है? (उत्तर) इसलिये कि जिन्हें सम्पूर्ण देवता, मुमुक्षु तथा ब्रह्मवादी (मुक्त पुरुष) भी नमस्कार करते हैं, उन्हें नमस्कार करना उचित ही है। ऋचा भी कहती है—'वे ब्रह्मा और वेदोंका भी पालन करनेवाले हैं, उन्हींको लक्ष्य करके ब्रह्मा स्तुतिके उपयुक्त मन्त्रोंका पाठ करके भगवान्‌को नमस्कार करते हैं; उन्हींमें इन्द्र, वरुण, मित्र तथा अर्यमा आदि देवताओंने अपना आश्रय बनाया है। इसीलिये उनके प्रति '**नमामि**' (नमस्कार करता हूँ) यों कहा जाता है।

(प्रश्न) अब यह बतानेकी कृपा करें कि उक्त मन्त्रमें '**अहम्**' इस पदका प्रयोग क्यों किया जाता है? (उत्तर) इसलिये कि श्रुति कहती है—'मैं इस मूर्त और अमूर्त जगत्‌से प्रथम उत्पन्न होनेवाला चेतन आत्मा हूँ। देवताओंसे भी पहले मेरी स्थिति है। मैं अमृतका केन्द्र हूँ। हे देव! जो मुझे धारण या स्वीकार करते हैं अथवा जो मुझे अपना आश्रय प्रदान करते हैं, उन्हीं आपने मेरा रक्षण भी किया है। मैं अन्न हूँ। मैं अन्नके भक्षण करनेवालेको भी खा जाता हूँ। मैं सम्पूर्ण विश्वको सूर्यकी ज्योतिकी भाँति अपने तेजसे तिरस्कृत कर सकता हूँ।' जो इस प्रकार जानता है, वही यथार्थ उपासक है। यह महोपनिषद् है।

~~~O~~~

# तृतीय उपनिषद्

## मन्त्रराज आनुष्टुभकी शक्ति तथा बीज

कहते हैं, देवताओंने जिज्ञासापूर्वक प्रजापतिसे कहा—'भगवन्! भगवान् नरसिंहके मन्त्रराज आनुष्टुभकी शक्ति और बीज क्या हैं, यह हमें बताइये।'

तब उन सुप्रसिद्ध प्रजापतिने कहा—भगवान् नृसिंहकी
~~~

शक्तिभूता जो यह माया है, निश्चय वही इस सम्पूर्ण जगत्‌की रचना करती है, इस सम्पूर्ण जगत्‌की रक्षा करती है तथा इस सम्पूर्ण जगत्‌का संहार करती है। अतः इस मायाको ही शक्ति जाने। जो इस मायारूप शक्तिको जानता है, वह पापसे तर जाता है, वह मृत्युसे पार हो जाता है, वह संसारसे भी तर जाता है तथा वह अमृतको भी प्राप्त कर लेता है। इस लोकमें वह महती समृद्धि प्राप्त करता है।

ब्रह्मवादी विचार करते हैं कि यह मायाशक्ति ह्रस्व है या दीर्घ है अथवा प्लुत है? यदि ह्रस्व है तो इसे इस रूपमें जाननेसे यह सम्पूर्ण पापोंको दग्ध कर देती है और उपासक अमृतत्वको प्राप्त होता है। यदि दीर्घ है तो इसे इस रूपमें जाननेसे साधक महान् ऐश्वर्यको प्राप्त होता है और अमृतत्वको भी प्राप्त कर लेता है। यदि यह प्लुत है तो इसे इस रूपमें जाननेसे मनुष्य ज्ञानवान् होता है और अमृतत्वको भी प्राप्त हो जाता है। इस विषयमें ऋषिने यह उदाहरण प्रस्तुत किया है—'हे मायाशक्तिरूप बिन्दुयुक्त स्वर! मैं सरलभावका इच्छुक तथा संसार-सिन्धुसे तरनेके लिये प्रयत्नशील होकर साधनके लिये उपयोगी दीर्घ आयु प्राप्त करनेके उद्देश्यसे भगवान् विष्णुकी शक्ति श्रीदेवीकी, श्रीलक्ष्मीजीकी (जो नृसिंहदेवकी शक्ति हैं), शङ्करजीकी शक्ति पर्वतराजपुत्री अम्बिकाकी, ब्रह्माजीकी शक्ति सरस्वतीदेवीकी, षष्ठीदेवी (स्कन्दशक्ति)-की, इन्द्रसेना नामसे प्रसिद्ध इन्द्रशक्तिकी तथा ब्रह्मप्राप्तिकी कारणभूता एवं साकाररूपमें प्रकट हुई विद्याशक्तिकी शरण लेता हूँ। आप उपर्युक्त शक्तियोंकी तथा मुझ उपासककी रक्षा करें।'

निश्चय ही सम्पूर्ण भूतोंका यह आकाश ही परम आधार है। ये सम्पूर्ण भूत आकाशसे ही उत्पन्न होते हैं। उत्पन्न होनेपर आकाशसे ही जीवन धारण करते हैं तथा मृत्यु होनेपर आकाशमें ही लीन हो जाते हैं; इसलिये आकाशको ही बीज—सबका मूल कारण जाने। इस विषयमें ऋषि (मन्त्र)-ने यह दृष्टान्त रखा है—'विशुद्ध परम धाममें अथवा बुद्धिमें रहनेवाले जो स्वयं प्रकाश पुरुषोत्तम हैं, वे ही अन्तरिक्षनिवासी वसु हैं, घरोंमें उपस्थित होनेवाले अतिथि हैं; यज्ञकी वेदीपर स्थापित होनेवाले अग्निदेव तथा उनमें आहुति डालनेवाले होता भी वे ही हैं; समस्त मनुष्योंमें अर्थात् भूलोकमें, उससे श्रेष्ठ स्वर्गलोकमें तथा सर्वश्रेष्ठ सत्यलोकमें भी उन्हींका निवास है। वे ही आकाशमें रहनेवाले हैं। जल, पृथ्वी, सत्कर्म तथा पर्वतोंमें प्रकट होनेवाले भी वे ही हैं; वे ही सबसे महान् परम सत्य हैं।' जो इस प्रकार जानता है, वह भी पूर्वोक्त फलका भागी होता है। यह महोपनिषद् है।

# चतुर्थ उपनिषद्

**मन्त्रराज आनुष्टुभके अङ्गभूत मन्त्र; प्रणव वाच्यरूप भगवान् नृसिंहदेवके चार पाद; स्तुतिके मन्त्र**

उन प्रसिद्ध देवताओंने प्रजापति ब्रह्माजीसे जिज्ञासापूर्वक कहा—'भगवन्! नृसिंहदेवके मन्त्रराज आनुष्टुभके अङ्गभूत मन्त्रोंका हमारे लिये वर्णन कीजिये।'

यह सुनकर वे सुप्रसिद्ध प्रजापति बोले—प्रणव (ॐकार), गायत्री, यजुर्लक्ष्मी तथा नृसिंहगायत्री—ये इस मन्त्रराजके अङ्गभूत मन्त्र हैं। इन सबको जानना चाहिये। जो जानता है, वह (लौकिक लाभके साथ ही) अमृतत्वको भी प्राप्त करता है॥ १॥

'ॐ' यह अक्षर (अविनाशी परमात्मा) है। यह दृश्यमान सम्पूर्ण जगत् इस परमात्मस्वरूप ॐकारकी ही उपव्याख्या—महिमाका विस्तार है। भूत, वर्तमान और भविष्य—इन तीनों कालोंसे सम्बन्ध रखनेवाला सब कुछ ॐकार ही है तथा उपर्युक्त तीनों कालोंसे अतीत जो कोई दूसरा तत्त्व है, वह भी ॐकार ही है। निश्चय ही यह सब कुछ ब्रह्म है। ये परमात्मा (भगवान् नृसिंहदेव) ब्रह्म हैं। उन सर्वात्मा श्रीनृसिंहदेवके चार पाद हैं। उनके समग्ररूपका तत्त्व समझानेके लिये श्रुतिने यहाँ चार पादोंकी कल्पना की है।

जाग्रत्-अवस्था तथा उसके द्वारा उपलक्षित यह सम्पूर्ण स्थूल जगत् ही जिनका स्थान—शरीर है अर्थात् जो सम्पूर्ण विश्वमें व्याप्त हो रहे हैं; जिनका ज्ञान इस बाह्य जगत्‌में फैला हुआ है अथवा जो बाह्य (स्थूल) जगत्‌को

ही अपनी प्रज्ञाका विषय बनाते हैं; भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः और सत्य—ये सात लोक ही जिनके अङ्ग हैं; पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण तथा चार अन्तःकरण—ये उन्नीस समष्टि करण ही जिनके मुख* हैं; जो स्थूल जगत्के भोक्ता (अनुभव और पालन करनेवाले) हैं तथा जो विश्व-शरीरमें स्थित नर (अन्तर्यामी पुरुष) होनेके कारण 'वैश्वानर' नाम धारण करते हैं, वे सर्वरूप 'वैश्वानर' ही पूर्णतम परमात्मा श्रीनृसिंहदेवके प्रथम पाद हैं। (चार व्यूहोंमें ये ही बलभद्रस्वरूप हैं।)

स्वप्नावस्था और उसके द्वारा उपलक्षित सूक्ष्म जगत् ही जिनका स्थान (शरीर) है, जिनका ज्ञान बाह्य जगत्की अपेक्षा आन्तरिक अर्थात् सूक्ष्म जगत्में व्याप्त है, जो पूर्वोक्त सात अङ्गों और उन्नीस मुखोंवाले हैं, जो सूक्ष्म जगत्के सूक्ष्म तत्त्वोंका अनुभव और पालन करनेवाले हैं, वे तैजस पुरुष (प्रकाशके स्वामी सूत्रात्मा—हिरण्यगर्भ) उन पूर्णब्रह्म परमात्मा श्रीनृसिंह-देवके द्वितीय पाद हैं। (चतुर्व्यूहोंमें ये ही प्रद्युम्नरूप हैं।)

जिस अवस्थामें सोया हुआ पुरुष किसी भी भोगकी कामना नहीं करता, कोई भी स्वप्न नहीं देखता, वह सुषुप्ति-अवस्था है। ऐसी सुषुप्ति तथा उसके द्वारा उपलक्षित सम्पूर्ण जगत्की प्रलयावस्था (जब कि सारा विश्व अपने कारणमें विलीन हो जाता है) जिनका स्थान (शरीर) है अर्थात् समष्टि कारण-तत्त्वमें जिनकी स्थिति है, जो एक रूपमें ही स्थित हैं अर्थात् जिनकी अभी नाना रूपोंमें अभिव्यक्ति नहीं हुई है, घनीभूत विज्ञान ही जिनका स्वरूप है, जो केवल आनन्दमय ही हैं, चिन्मय प्रकाश ही जिनका मुख है तथा जो एकमात्र अपने स्वरूपभूत आनन्दके ही उपभोक्ता हैं, जिनके अतिरिक्त और कोई है ही नहीं, वे प्राज्ञ पुरुष ही पूर्ण ब्रह्म परमात्मा श्रीनृसिंहदेवके तृतीय पाद हैं। (चतुर्व्यूहोंमें इन्हींको अनिरुद्ध कहा गया है।)

इस प्रकार तीनों पादोंके रूपमें उपवर्णित ये परमात्मा सबके ईश्वर हैं। ये सर्वज्ञ हैं। ये अन्तर्यामी हैं। ये सम्पूर्ण विश्वके कारण हैं तथा समस्त प्राणियोंकी उत्पत्ति, (स्थिति) और प्रलयके स्थान भी ये ही हैं।

जो न सूक्ष्मको जानता है न स्थूलको जानता है और न दोनोंको ही जानता है; जिसे जाननेवाला और न जाननेवाला—कुछ भी नहीं कहा जा सकता और जो न प्रज्ञानका ही घनीभूत रूप है; जो देखा नहीं जा सकता, व्यवहारमें नहीं लाया जा सकता और न पकड़नेमें ही आ सकता है; जिसका कोई लक्षण अथवा चिह्न—आकार भी नहीं है; जो चिन्तन करनेमें नहीं आ सकता और न बतलानेमें ही आ सकता है; एकमात्र आत्मसत्ताकी प्रतीति—अनुभूति ही जिसका सार अथवा स्वरूप है तथा जिसमें प्रपञ्चका सर्वथा अभाव है—ऐसा सर्वथा शान्त, कल्याणमय, अद्वितीय तत्त्व उन पूर्णब्रह्म परमात्मा नृसिंहदेवका चतुर्थ पाद है। यों ज्ञानी महात्मा मानते हैं। इस प्रकार चार पादोंमें जिनका वर्णन किया गया है, वे ही प्रणववाच्य परमात्मा भगवान् नृसिंहदेव हैं और वे ही जाननेयोग्य हैं (उन्हींकी महिमाका इस उपनिषद्में वर्णन है)॥ २॥

अब सावित्रीका परिचय देते हैं। (यद्यपि मन्त्रराजके पदोंमें 'सवितृ' वाचक शब्दका उपादान नहीं हुआ है, तथापि तिमिरविनाशक सूर्यकी भाँति वह उपासकोंके अन्तस्तमको दूर करनेवाला है—यह प्रदर्शित करनेके लिये ही 'सावित्री' को अङ्ग-मन्त्र माना गया है।) यह सावित्री-मन्त्र गायत्री-छन्दविशिष्ट यजुर्मन्त्रके रूपमें निरूपित हुआ है। उसके द्वारा ही यह सब कुछ व्याप्त है। आठ अक्षरोंका मन्त्र होनेसे ही उसको गायत्री कहा गया है। मन्त्र इस प्रकार है—'**घृणिः सूर्य आदित्यः।**' '**घृणिः**' ये दो अक्षर हैं। '**सूर्यः**' ये तीन अक्षर हैं† तथा '**आदित्यः**' ये तीन अक्षर हैं। यह सावित्र-मन्त्रका आठ अक्षरोंवाला पद है; इसको आरम्भमें श्रीबीज (श्रीं)-से विभूषित किया जाता है। जो इस प्रकार इस मन्त्रको जानता है, वह लक्ष्मीके द्वारा अभिषिक्त होता है। यही बात ऋचाद्वारा कही गयी है—'ऋग्वेदकी ऋचाएँ अविनाशी परमव्योमस्वरूप स्वप्रकाश परमात्मामें प्रतिष्ठित हैं, जहाँ कि सम्पूर्ण देवता भलीभाँति निवास करते हैं। जो उपासक उन स्वप्रकाश परमात्माको नहीं जानता, वह ऋचाओंके स्वाध्यायसे क्या कर लेगा? तथा जो उन परमात्माको जानते हैं, वे ही ये उपासक उनके

---

* विषय-ग्रहणमें द्वारभूत होनेके कारण इनको मुख कहा गया है।

† यद्यपि इसमें दो ही अक्षर सस्वर हैं, तथापि वैदिक छन्दोंके लिये स्वीकृत व्यूहके नियमानुसार 'सूर्यः' के स्थानमें 'सूरियः' पाठ मानकर गणना करनेसे तीन अक्षर होते हैं। गायत्री-मन्त्रमें भी 'वरेण्यम्' के स्थानमें 'वरेणियम्' मानकर गणना करनेसे ही चौबीस अक्षर पूरे होते हैं।

परमधाममें सुखपूर्वक निवास करते हैं।' इसी प्रकार जो सावित्र-मन्त्रको जानता है, उसको ऋक्, साम और यजुर्वेदके मन्त्रोंसे कोई प्रयोजन नहीं है।

**ॐ भूर्लक्ष्मीर्भुवर्लक्ष्मीः स्वर्लक्ष्मीः कालकर्णी तन्नो महालक्ष्मीः प्रचोदयात्।**

'जो सच्चिदानन्दमयी देवी भूर्लोककी लक्ष्मी—शोभा, भुवर्लोककी लक्ष्मी तथा स्वर्लोककी लक्ष्मी हैं, जो कालकर्णी नामसे विख्यात हैं, वे भगवती महालक्ष्मी हमें सत्कर्मोंके लिये प्रेरणा देती रहें।' निश्चय ही यह महालक्ष्मीकी यजुर्वेदोक्त गायत्री है, जो चौबीस अक्षरोंकी है। यह सब—जो कुछ यह प्रतीत हो रहा है, निःसंदेह गायत्री ही है। इसलिये जो इस यजुर्वेदसम्बन्धिनी महालक्ष्मी गायत्रीको जानता है, वह बड़ी भारी सम्पत्तिको प्राप्त होता है।

**ॐ नृसिंहाय विद्महे वज्रनखाय धीमहि तन्नः सिंहः प्रचोदयात्॥**

'ॐ श्रीनृसिंहदेवकी प्राप्तिके लिये हम उपासना करते हैं, वज्रके समान नखोंवाले उन भगवान्‌के लिये ही उनके स्वरूपका हम चिन्तन करते हैं; वे भगवान् नरसिंह हमें प्रेरणा दें।' यही नृसिंहगायत्री है, जो देवताओं और वेदोंका भी आदि कारण है। जो इस प्रकार जानता है, वह आदिकारणभूत भगवान्‌से संयुक्त होता है॥ ३॥

देवताओंने प्रजापतिसे फिर पूछा—'भगवन्! किन मन्त्रोंसे स्तुति करनेपर भगवान् नृसिंहदेव प्रसन्न होते और अपने स्वरूपका प्रत्यक्ष दर्शन कराते हैं, यह हमें बतलायें।' यह सुनकर उन सुप्रसिद्ध प्रजापतिने कहा—

**ॐ उं ॐ यो ह वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च ब्रह्मा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १॥**

**ॐ ग्रं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च विष्णुर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २॥**

**ॐ वीं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च महेश्वरो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३॥**

**ॐ रं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च पुरुषो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ४॥**

**ॐ मं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्चेश्वरो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ५॥**

**ॐ हां ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्या सरस्वती भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ६॥**

**ॐ विं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्या श्रीर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ७॥**

**ॐ ष्णुं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्या गौरी भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ८॥**

**ॐ ज्वं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्या प्रकृतिर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ९॥**

**ॐ लं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्या विद्या भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १०॥**

**ॐ तं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्चोङ्कारो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ११॥**

**ॐ सं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्याश्च-तस्रोऽर्धमात्रा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १२॥**

**ॐ वं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये च वेदाः साङ्गाः सशाखा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १३॥**

**ॐ तों ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये पञ्चाग्नयो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १४॥**

**ॐ मुं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्याः सप्तव्याहृतयो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १५॥**

**ॐ खं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये चाष्टौ लोकपाला भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १६॥**

**ॐ नृं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये चाष्टौ वसवो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १७॥**

**ॐ सिं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये च रुद्रा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १८॥**

**ॐ हं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये च आदित्या भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ १९॥**

**ॐ भीं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्ये चाष्टौ ग्रहा भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २०॥**

**ॐ षं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यानि पञ्च महाभूतानि भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २१॥**

**ॐ णं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च कालो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २२॥**

**ॐ भं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च मनुर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २३॥**

**ॐ द्रं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च मृत्युर्भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २४॥**

**ॐ मृं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च यमो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २५॥**

**ॐ त्युं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्चान्तको**

**भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २६॥**

**ॐ मृं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च प्राणो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २७॥**

**ॐ त्युं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च सूर्यो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २८॥**

**ॐ नं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च सोमो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ २९॥**

**ॐ मां ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च विराट् पुरुषो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३०॥**

**ॐ म्यं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च जीवो भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३१॥**

**ॐ हं ॐ यो वै नृसिंहो देवो भगवान्यश्च सर्वं भूर्भुवः स्वस्तस्मै वै नमो नमः॥ ३२॥**

'ॐ (उं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि ब्रह्मा एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हींको हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (ग्रं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि विष्णु एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (वीं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि महेश्वर एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (रं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि पुरुष एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (मं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि ईश्वर एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (हां) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि सरस्वती एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (विं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि श्री एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (ष्णुं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि गौरी एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (ज्वं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि प्रकृति एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (लं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि विद्या एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (तं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि ॐकार एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (सं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि चार अर्धमात्रा एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (वं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि अङ्ग, शाखा और इतिहाससहित वेद एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (तों) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि पाँच अग्नियाँ एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (मुं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि सात महाव्याहृतियाँ एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (खं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि आठ लोकपाल एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (नृं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि आठ वसु एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (सिं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि ग्यारह रुद्र एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (हं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि बारह आदित्य एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (भीं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि आठ ग्रह एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (षं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि पञ्च महाभूत एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (णं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि काल एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (भं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि मनु एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ

(द्रं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि मृत्यु एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (मृं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि यम एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (त्युं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि अन्तक एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (मृं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि प्राण एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (त्युं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि सूर्य एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (नं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि सोम एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (मां) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि विराट् पुरुष एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (म्यं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि जीव एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है। ॐ (हं) निश्चय ही जो वे परम प्रसिद्ध भगवान् नृसिंहदेव हैं, जो कि सर्वरूप एवं भूः-भुवः-स्वः—त्रिभुवनरूप हैं, उन्हें ही हमारा बारम्बार नमस्कार है॥ १—३२॥

ये (मन्त्रराजके ३२ अक्षरोंके अनुसार) बत्तीस मन्त्र हैं। इन मन्त्रोंको बताकर प्रजापतिने उन देवताओंसे कहा—'देवगण! तुमलोग इन मन्त्रोंसे प्रतिदिन भगवान्‌का स्तवन करो। इससे भगवान् नृसिंहदेव प्रसन्न होते और अपने स्वरूपका प्रत्यक्ष दर्शन कराते हैं। इसलिये जो इन मन्त्रोंद्वारा नित्य भगवान् नरसिंहदेवकी स्तुति करता है, वह उनका प्रत्यक्ष दर्शन पाता है तथा उनके विश्वरूपको देख लेता है। साथ ही वह अमृतत्वको भी प्राप्त होता है। जो इस प्रकार जानता है, उसे भी वही फल मिलता है। यह महोपनिषद् है॥ ४॥

## पञ्चम उपनिषद्

### आनुष्टुभ मन्त्रराजके सुदर्शन नामक महाचक्रका वर्णन; मन्त्रराजके जपका फल

कहते हैं, देवताओंने श्रद्धापूर्वक प्रजापतिसे कहा—"भगवन्! श्रीनृसिंहदेवके आनुष्टुभ मन्त्रराजका जो 'महाचक्र' नामक चक्र है, उसका हमसे वर्णन कीजिये। यह चक्र सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण करनेवाला तथा मोक्षका द्वार है—इस प्रकार योगिजन वर्णन करते हैं।"

यह सुनकर वे प्रसिद्ध प्रजापति बोले—निश्चय ही यह सुदर्शन नामक महाचक्र छः अक्षरोंका है; इसीलिये यह छः अरोंसे युक्त होता है—छः दलोंवाला चक्र बनता है। छः ही ऋतुएँ होती हैं; ऋतुओंसे ही इसके अरोंकी समानता की जाती है अर्थात् इसके छः दलोंमें छः ऋतुओंकी भावना करनी चाहिये। इसके मध्यमें नाभि होती है। नाभिमें ही ये अरे प्रतिष्ठित होते हैं। फिर यह सारा चक्र मायारूप नेमिसे आवेष्टित होता है। माया आत्माका स्पर्श नहीं करती, इसलिये वह षड्दल-चक्र बाहरकी ओरसे ही मायाद्वारा आवेष्टित होता है। इसके बाद आठ अरोंसे युक्त अष्टदल चक्र बनता है। आठ अक्षरोंकी ही एक पादवाली गायत्री होती है; गायत्रीके अक्षरोंसे ही इस चक्रके अरोंकी तुलना की जाती है। (इसके आठ दलोंमें गायत्रीके एक पादकी भावना करे।) यह भी बाहरकी ओरसे मायाद्वारा आवेष्टित होता है। निश्चय ही यह माया प्रत्येक क्षेत्रको व्याप्त किये रहती है। इसके बाद द्वादश अरोंसे युक्त द्वादशदलका चक्र होता है। बारह अक्षरोंका ही जगती छन्द (-का एक पाद) होता है। जगतीकी अक्षर-संख्यासे ही यह चक्र संतुलित होता है। (इसके द्वादश दलोंमें जगतीके एक पादकी भावना करे।) यह भी बाहरसे मायाद्वारा आवेष्टित होता है। तदनन्तर षोडशारचक्र है, जो सोलह दलोंसे सम्पन्न होता है। निश्चय ही पुरुष सोलह कलाओंसे युक्त है। पुरुष (परमात्मा) ही यह सब कुछ है। अतः षोडशारचक्रके अरोंको पुरुषकी कलाओंकी उपमा दी जाती है। (इसके षोडश दलोंमें पुरुषकी—अन्तर्यामी परमात्माकी सोलह कलाओंकी भावना करे।) यह भी बाहरकी ओरसे मायाद्वारा आवेष्टित होता है। तत्पश्चात् बत्तीस अरोंसे युक्त अर्थात् बत्तीस दलोंवाला चक्र है। बत्तीस अक्षरोंका ही अनुष्टुप् छन्द होता है। अनुष्टुप्के अक्षरोंसे ही इसके अरोंकी तुलना होती है। (इसके बत्तीस दलोंमें अनुष्टुप्की भावना करे।) यह चक्र भी बाहरकी ओरसे मायाद्वारा आवेष्टित है। अरोंसे ही यह पूर्णतः आबद्ध है। वेद ही इसके अरे हैं। पत्तोंसे ही यह

# सुदर्शनमहाचक्र

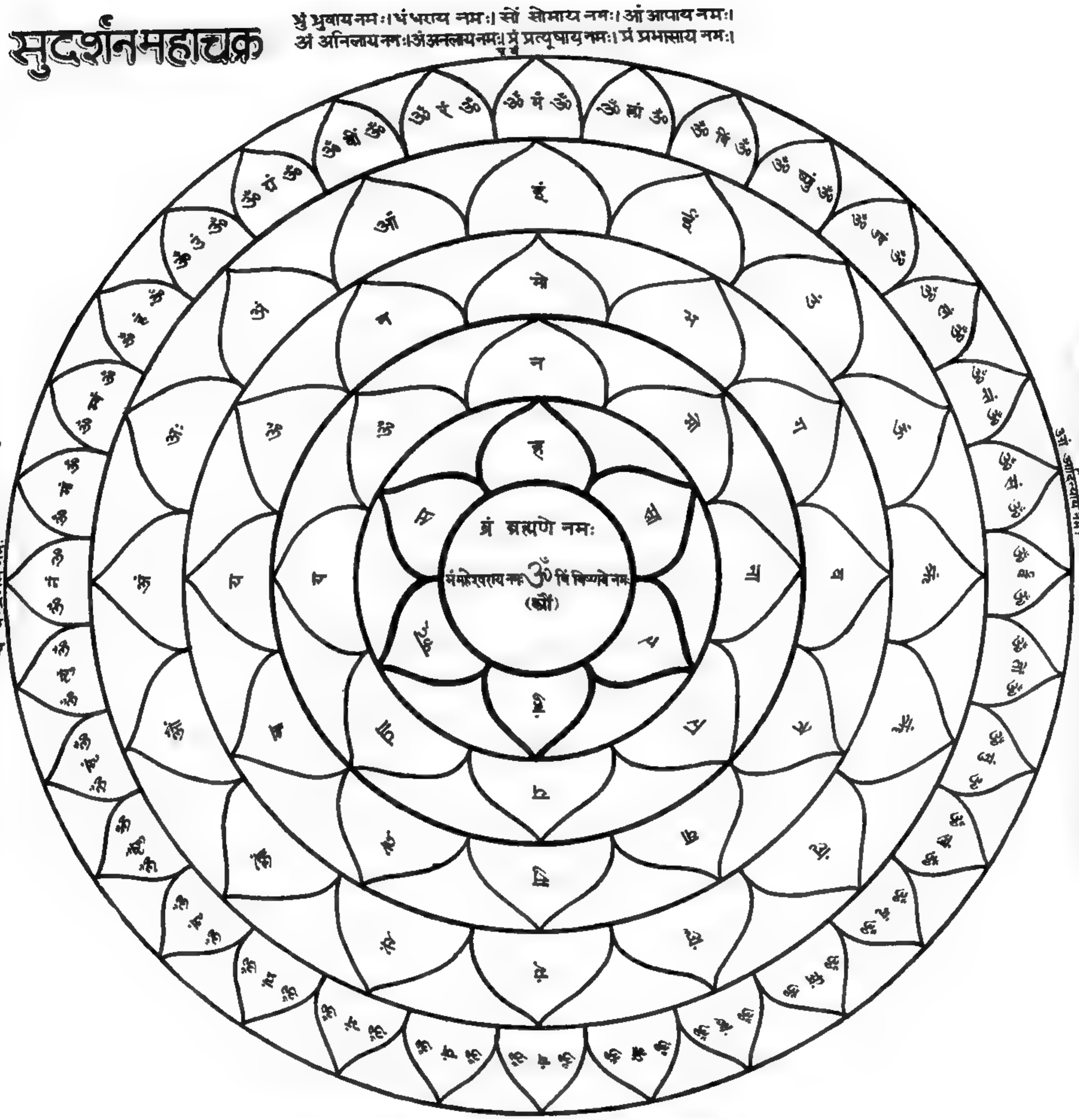
भुं भुवाय नमः। धं धराय नमः। सों सोमाय नमः। आं आपाय नमः।
अं अनिलाय नमः। अंअनलाय नमः। प्रं प्रत्यूषाय नमः। प्रं प्रभासाय नमः।
ह्रीं हराय नमः। वं वसुहृदयाय नमः। त्र्यं त्र्यम्बकाय नमः। आं आदित्याय नमः।
वृं वृषाकपये नमः। कें कपर्दिने नमः। रुं रुद्राय नमः। सें सेनान्याय नमः। कें कपालिने नमः।
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय
ॐ नमः सङ्कर्षणाय
ॐ नमः प्रद्युम्नाय
ॐ नमः अनिरुद्धाय
ॐ नमः पुरुषोत्तमाय
ॐ नमः अधोक्षजाय
ॐ नमः नारसिंहाय
ॐ नमः अच्युताय
ॐ नमः जनार्दनाय
ॐ नमः उपेन्द्राय
ॐ नमः हरये
ॐ नमः श्रीकृष्णाय
ॐ नमः
ॐ नमः
ॐ नमः

सब ओर घूमता है। छन्द ही इसके पत्ते हैं॥ १॥

यह बत्तीस दलोंसे सम्पन्न महाचक्र ही सुदर्शन नामसे विख्यात है। इसके मध्यभागमें स्थित जो नाभिस्थान है, उसमें नृसिंह-देवता-सम्बन्धी अविनाशी तारक-मन्त्रका न्यास करे। वह तारक-मन्त्र एक अक्षरका—ॐ है। छः पत्रोंमें छः अक्षरोंवाले '**सहस्त्रार हुं फट्**' इस सुदर्शन मन्त्रका न्यास होता है। आठ दलोंमें आठ अक्षरोंवाले '**ॐ नमो नारायणाय**' इस नारायण-मन्त्रका न्यास होता है। बारह दलोंमें द्वादशाक्षर वासुदेव-मन्त्र ( **ॐ नमो भगवते वासुदेवाय** )-का न्यास किया जाता है। सोलह दलोंमें वर्णमालाके आदि सोलह अक्षर, जो विन्दुयुक्त सोलह स्वर-वर्णोंके रूपमें हैं, रखे जाते हैं। बत्तीस दलोंमें बत्तीस अक्षरोंके नृसिंह-देवतासम्बन्धी मन्त्रराज आनुष्टुभका न्यास किया जाता है। (एक-एक दलमें मूल-मन्त्रके एक-एक अक्षरको प्रणवसे सम्पुटित करके रखा जाता है।) वही यह सुदर्शन नामसे प्रसिद्ध महाचक्र है, जो सब कामनाओंको पूर्ण करनेवाला, मोक्षका द्वार, ऋक्, यजुः और सामवेदस्वरूप तथा ब्रह्ममय एवं अमृतमय है। उसके पूर्वभागमें आठ वसुगण रहते हैं। दक्षिणभागमें ग्यारह रुद्र, पश्चिमभागमें बारह आदित्य, उत्तरभागमें विश्वेदेव, नाभिमें ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेवजी एवं पार्श्वभागमें सूर्य और चन्द्रमा हैं।

यही बात ऋचाद्वारा कही गयी है—'अविनाशी परम आकाशस्वरूप भगवान् नृसिंहमें (तथा उनके इस सुदर्शन महाचक्रमें) ही ऋक् आदि सम्पूर्ण वेद प्रतिष्ठित हैं। उनमें ही सम्पूर्ण देवता निवास करते हैं। जो उन परमात्मा नृसिंहदेव तथा उनके महाचक्रको नहीं जानता, वह ऋग्वेद पढ़कर क्या करेगा? उसका वेदाध्ययन व्यर्थ है। और जो उन भगवान् नृसिंहदेव तथा उनके सुदर्शन महाचक्रको जानते हैं, वे ही उपासक भगवान्‌में उत्तम स्थितिको प्राप्त करते हैं।' इस सुदर्शन नामक महाचक्रको जो बालक अथवा युवा होकर भी जान लेता है, वह महान् बन जाता है; वह सबका गुरु है। वह सब मन्त्रोंका उपदेशक हो जाता है। मन्त्रराज अनुष्टुप्‌से होम करे। अनुष्टुप्-मन्त्रसे ही पूजन करे। यह सुदर्शन महाचक्र राक्षसजनित भयका नाश करनेवाला है, मृत्युसे तारनेवाला है। इसे यन्त्ररूपमें गुरुद्वारा प्राप्त करके कण्ठमें, बाँहमें अथवा शिखामें बाँध ले। इस मन्त्रके उपदेशक गुरुको सात द्वीपोंवाली समूची पृथ्वी भी दक्षिणारूपमें दे दी जाय तो उसके लिये यह पर्याप्त नहीं है अर्थात् उस मन्त्रकी महिमाके समक्ष सम्पूर्ण पृथ्वीका दान भी तुच्छ है। अतएव श्रद्धा और शक्तिके अनुसार जो कुछ भी हो सके, थोड़ी बहुत भूमि दान करनी चाहिये; वही दक्षिणा होती है॥ २॥

उन प्रसिद्ध देवताओंने पुनः प्रजापतिसे श्रद्धापूर्वक पूछा—'भगवन्! आनुष्टुभ मन्त्रराज नारसिंहका क्या फल है, यह हमें बताइये।'

यह सुनकर उन सुप्रसिद्ध प्रजापतिने कहा—जो इस नारसिंह मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह मानो अग्निमें तपाया जाकर शुद्ध हो जाता है। वह वायुपूत होता है। वह सूर्य और चन्द्रमाद्वारा शुद्ध कर दिया जाता है। वह सत्यपूत होता है; वह लोकपूत होता है; वह ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा समस्त वेदोंद्वारा पवित्र कर दिया जाता है।

सारांश यह कि वह सबके द्वारा सर्वथा पवित्र कर दिया जाता है॥ ३॥

जो भगवान् नृसिंहदेवके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह मृत्युको पार कर जाता है। वह पापसे तर जाता है। वह ब्रह्महत्याको पार कर जाता है। वह भ्रूणहत्यासे तर जाता है। वह वीरहत्यासे तर जाता है। वह सबकी हत्यासे तर जाता है। वह जन्म-मृत्युरूप संसारको पार कर जाता है। वह सबको पार कर जाता है॥ ४॥

जो भगवान् नृसिंहदेवके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह अग्निकी गतिको रोक देता है, वह वायुकी गतिको रोक देता है, वह सूर्यकी गतिको रोक देता है, वह चन्द्रमाकी गतिको रोक देता है, वह जलके प्रवाहको रोक देता है, वह सम्पूर्ण देवताओंको स्तब्ध कर देता है, वह सम्पूर्ण ग्रहोंकी गतिको रोक देता है तथा वह विषका भी स्तम्भन कर देता है॥ ५॥

जो भगवान् नृसिंहदेवके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह देवताओंका आकर्षण कर लेता है। वह यक्षोंको भी अपने पास खींच लेता है। वह नागोंका आकर्षण कर लेता है। वह ग्रहोंको अपने समीप आकृष्ट कर लेता है। वह मनुष्योंको भी आकृष्ट कर लेता है। वह सबको आकृष्ट कर लेता है। वह सबको आकृष्ट कर लेता है॥ ६॥

जो भगवान् नृसिंहदेवके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह भूलोकको जीत लेता है, वह भुवर्लोकको जीत लेता है, वह स्वर्गलोकको जीत लेता है, वह महर्लोकको जीत लेता है, वह जनलोकको जीत लेता है, वह तपोलोकको जीत लेता है, वह सत्यलोकको जीत लेता है, वह सब लोकोंको जीत लेता है, वह सब लोकोंको जीत लेता है॥ ७॥

जो भगवान् नृसिंहदेवके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह अग्निष्टोम यज्ञद्वारा यजन कर लेता है, वह उक्थ्य यागद्वारा यजन कर लेता है, वह 'षोडशी' से यजन कर लेता है, वह वाजपेयद्वारा यजन कर लेता है। वह अतिरात्रद्वारा यजन कर लेता है। वह आप्तोर्यामद्वारा यजन कर लेता है। वह अश्वमेधद्वारा यजन कर लेता है। वह सम्पूर्ण क्रतुओंद्वारा यजन कर लेता है। वह सम्पूर्ण क्रतुओंद्वारा यजन कर लेता है॥ ८॥

जो भगवान् नृसिंहदेवके इस मन्त्रराज आनुष्टुभका नित्य जप करता है, वह मानो ऋग्वेदका स्वाध्याय करता है। वह यजुर्वेदका स्वाध्याय करता है। वह सामवेदका स्वाध्याय करता है। वह अथर्ववेदका स्वाध्याय करता है। वह उसीके आङ्गिरस भागका स्वाध्याय करता है। वह शाखाओंका स्वाध्याय करता है। वह पुराणोंका स्वाध्याय करता है। वह कल्पों (यज्ञविधिको बतलानेवाले शास्त्रों)-का स्वाध्याय करता है। वह गाथाओंका अध्ययन करता है। वह नाराशंसी नामक आख्यानोंका अध्ययन करता है। वह प्रणवका अध्ययन करता है। जो प्रणवका अध्ययन करता है, वह सबका अध्ययन करता है। वह सबका अध्ययन करता है॥ ९॥

जिनका उपनयन-संस्कार नहीं हुआ है, ऐसे जो सौ बालक हैं, वे एक उपनयन-संस्कारसम्पन्न ब्रह्मचारीके तुल्य हैं। जो सौ ब्रह्मचारी हैं, वे एक श्रोत्रिय (वेदपाठी) गृहस्थके तुल्य हैं। जो सौ गृहस्थ हैं, वे एक वानप्रस्थके तुल्य हैं; जो सौ वानप्रस्थ हैं, वे एक संन्यासीके तुल्य हैं। जो सौ संन्यासी हैं, वे एक रुद्र-जापक (रुद्र-मन्त्र अथवा रुद्राष्टाध्यायीका पाठ करनेवाले साधक)-के तुल्य हैं। जो सौ रुद्र-जापक हैं, वे एक अथर्वशिरस् एवं अथर्वशिखा नामक उपनिषद्का स्वाध्याय करनेवालेके तुल्य हैं तथा जो सौ अथर्ववेदीय उपनिषदोंके स्वाध्यायकर्ता हैं, वे मन्त्रराज नारसिंहका जप करनेवाले एक साधकके तुल्य हैं। मन्त्रराजका जप करनेवाले उपासकको वह परम धाम निश्चय ही प्राप्त होता है, जहाँ सूर्य नहीं तपता, जहाँ वायु नहीं बहती, जहाँ चन्द्रमा नहीं प्रकाशित होता, जहाँ तारे नहीं चमकते, जहाँ आग नहीं जलाती, जहाँ मृत्यु नहीं प्रवेश कर पाती, जहाँ दुःखका कोई प्रभाव नहीं होता, जो सदा आनन्दमय, परमानन्दपूर्ण, शान्त, शाश्वत, सदा कल्याणमय, ब्रह्मादि देवताओंद्वारा वन्दनीय तथा योगियोंका भी परम ध्येयरूप परमपद है और जहाँ जाकर योगी (परमात्मामें लगे हुए पुरुष) इस संसारमें नहीं लौटते।

इसके सम्बन्धमें ऐसी ही बात ऋग्वेदकी ऋचाद्वारा भी बतायी गयी है—

'जो आकाशमें तेजोमय सूर्यमण्डलकी भाँति, परमव्योममें चिन्मय प्रकाशद्वारा सब ओर व्याप्त है, भगवान् विष्णुके उस परमधामको विद्वान् उपासक सदा ही देखते हैं। साधनामें सदा जाग्रत् रहनेवाले निष्काम उपासक ब्राह्मण वहाँ पहुँचकर उस परमधामको और भी उद्दीप्त किये रहते हैं, जिसे विष्णुका परमपद कहते हैं।' वह परमपद निष्काम उपासकको प्राप्त होता है। वह यह परम-पद निष्काम उपासकको प्राप्त होता है। जो इस प्रकार जानता है, वह उक्त फलका भागी होता है। यह महा-उपनिषद् है॥ १०॥

॥ अथर्ववेदीय श्रीनृसिंहपूर्वतापनीयोपनिषद् समाप्त॥

## शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः॥
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!